Shodhpith
International Multidisciplinary Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed & Refereed Journal)
(Multidisciplinary, Bimonthly, Multilanguage)
Volume: 2 Issue: 3 May-June 2026

आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन

लाखन सिंह
प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, गुरुकुल कांगड़ी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार
प्रो. प्रभात कुमार
प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, गुरुकुल कांगड़ी समविश्वविद्यालय, हरिद्वार

Article Info: *(Recieved- 10/03/2026, Accept- 10/4/2026, Published- 10/05/2026)*
DOI- 10.64127/Shodhpith.2026v2i3002

प्रस्तावना

हर्षत माता मंदिर तथा चाँद बावड़ी भारतीय स्थापत्य एवं मूर्तिकला परम्परा के ऐसे अद्वितीय केन्द्र हैं, जिन्होंने प्रारम्भिक मध्यकालीन राजस्थान की सांस्कृतिक, धार्मिक तथा कलात्मक चेतना को मूर्त रूप प्रदान किया। राजस्थ. ान के दौसा जनपद में स्थित आभानेरी प्राचीन काल में 'आभानगरी' अथवा 'अभानगरी' के नाम से विख्यात था। गुर्जर–प्रतिहार काल में यह क्षेत्र धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का एक महत्वपूर्ण केन्द्र रहा, जहाँ वैष्णव, शैव तथा शाक्त उपासना पद्धतियों का समन्वित विकास दृष्टिगोचर होता है। यहाँ प्राप्त मंदिर अवशेष, स्थापत्य खण्ड तथा विविध देवी–देवताओं की मूर्तियाँ तत्कालीन कला–संवेदना, धार्मिक आस्था और शिल्प–कौशल के सशक्त प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

आभानेरी का हर्षत माता मंदिर भारतीय नागर शैली की मंदिर वास्तुकला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यद्यपि वर्तमान समय में यह मंदिर भग्नावस्था में विद्यमान है, तथापि इसके अवशेषों में निहित मूर्तिकला आज भी तत्कालीन कलाकारों की अद्भुत सृजनात्मक क्षमता का परिचय देती है। मंदिर की भित्तियों, जंघाओं, तोरणों तथा स्थापत्य खण्डों पर उत्कीर्ण मूर्तियाँ न केवल धार्मिक आख्यानों को अभिव्यक्त करती हैं, अपितु तत्कालीन समाज की सांस्कृतिक चेतना और दार्शनिक विचारधारा को भी उद्घाटित करती हैं। इन मूर्तियों में वैष्णव धर्म से संबंधित अनेक अवतारों का अंकन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

वैष्णव धर्म में भगवान विष्णु के दशावतारों की अवधारणा भारतीय धार्मिक चिन्तन की एक महत्त्वपूर्ण देन है। इन अवतारों के माध्यम से धर्म की पुनर्स्थापना, अधर्म का विनाश तथा भक्तों की रक्षा का सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है। विष्णु के अवतारों में नृसिंह अवतार अत्यन्त विशिष्ट एवं दार्शनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। यह अवतार आधा मानव और आधा सिंह स्वरूप में भगवान विष्णु की उस शक्ति का प्रतीक है, जो अन्याय, अत्याचार और अहंकार के विनाश हेतु प्रकट होती है। पुराणों के अनुसार हिरण्यकशिपु के अत्याचारों से पृथ्वी और देवगण त्रस्त हो उठे थे। उसके पुत्र प्रह्लाद की विष्णुभक्ति को समाप्त करने के अनेक प्रयास किए गए, किन्तु अन्ततः भगवान विष्णु ने नृसिंह रूप धारण कर संध्या समय, चौखट पर, अपने नखों द्वारा हिरण्यकशिपु का वध किया। इस

प्रकार यह अवतार धर्म और भक्ति की विजय का प्रतीक बन गया।

आभानेरी से प्राप्त नृसिंह प्रतिमाएँ इसी वैष्णव धार्मिक परम्परा की सशक्त कलात्मक अभिव्यक्ति हैं। इन प्रतिमाओं में कलाकारों ने नृसिंह के उग्र, वीर तथा दैवी स्वरूप को अत्यन्त प्रभावपूर्ण ढंग से अंकित किया है। अधिकांश प्रतिमाओं में नृसिंह को हिरण्यकशिपु का वध करते हुए प्रदर्शित किया गया है, जहाँ उनके मुखमण्डल पर तीव्र क्रोध, विशाल नेत्र, फैली हुई केशराशि तथा सिंहमुख की प्रखरता स्पष्ट दिखाई देती है। साथ ही शरीर की मांसलता, गतिशीलता तथा भावाभिव्यक्ति प्रतिहारकालीन मूर्तिकला की उच्च कोटि की कलात्मकता को प्रकट करती है। इन प्रतिमाओं में केवल धार्मिक कथा का चित्रण नहीं, बल्कि दैवी शक्ति और धर्मरक्षा के आदर्श का भी प्रतीकात्मक निरूपण किया गया है।

शैलीगत दृष्टि से आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाएँ गुर्जर–प्रतिहार कला की प्रमुख विशेषताओं को अभिव्यक्त करती हैं। मूर्तियों में अलंकरण की सूक्ष्मता, अंग–प्रत्यंगों का संतुलित गठन, आभूषणों की बारीकी तथा भावाभिव्यक्ति की तीव्रता विशेष उल्लेखनीय है। कलाकारों ने नृसिंह के उग्र स्वरूप को केवल शारीरिक बल के माध्यम से नहीं, बल्कि चेहरे की भाव–भंगिमा और नाटकीय संरचना द्वारा भी प्रभावशाली बनाया है। प्रतिमाओं में अंकित प्रभामण्डल, केश विन्यास, हार, यज्ञोपवीत तथा अन्य अलंकरण तत्कालीन शिल्प–परम्परा की परिपक्वता को दर्शाते हैं।

धार्मिक दृष्टि से ये प्रतिमाएँ केवल पूजा–अर्चना का माध्यम नहीं थीं, बल्कि वे धर्म, नीति और नैतिकता के आदर्शों को जनसामान्य तक पहुँचाने का सशक्त साधन भी थीं। मंदिरों की मूर्तिकला भारतीय समाज में दृश्य–शिक्षा का कार्य करती थी, जिसके माध्यम से पुराणिक आख्यानों और धार्मिक सिद्धान्तों का प्रचार–प्रसार किया जाता था। नृसिंह प्रतिमाओं का अंकन इस तथ्य का द्योतक है कि आभानेरी क्षेत्र में वैष्णव धर्म का प्रभाव पर्याप्त रूप से विद्यमान था और विष्णु उपासना को विशेष महत्त्व प्राप्त था।

अतः आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाओं का अध्ययन केवल कला–ऐतिहासिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि यह प्रारम्भिक मध्यकालीन राजस्थान की धार्मिक प्रवृत्तियों, सांस्कृतिक समन्वय तथा मूर्तिकला परम्परा को समझने के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है। ये प्रतिमाएँ भारतीय मूर्तिकला की उस समृद्ध परम्परा की प्रतिनिधि हैं, जिसमें धर्म, दर्शन और कला का अद्भुत समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

भौगोलिक स्थिति व निर्माताः–

आभानेरी गाँव राजस्थान के दौसा जिले की बाँदी कुई तहसील के अन्तर्गत आता है। पास में ही एक रेलवे स्टेशन बाँदी कुई से 10 किलो मीटर लगभग दूरी पर स्थित है। बाँदी कुई से लगभग 6 किलो मीटर दूरी पर बाणगंगा नदी के दक्षिण छोर पर स्थित है। 8वीं 9वीं शताब्दी में गुर्जर प्रतिहारवंश की राजधानी के रुप में विकसित हुआ था। इस गाँव के निर्माण के प्रमाण अभाव को लेकर एक से भी अधिक विद्वानों के मत प्रस्तुत किये गये है। डॉक्टर जगदीश सिंह गहलोत ने अपनी पुस्तक में इस गाँव को गुर्जर प्रतिहार शासक भोज की अभय नगरी कहा हैं! भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग के अनुसार आभानेरी का निर्माण कार्य चौहान वंश के शासक चाँद द्वारा 8वीं–9वीं शताब्दी में करवाया गया। मेरे सर्वेक्षण के द्वारा और यहाँ के स्थानीय निवासियों के द्वारा और प्रो० प्रभार कुमार के द्वारा लिखी गई 'उत्तर भारत के प्रमुख मन्दिर' पुस्तक के अध्ययन करने के बाद यह मन्दिर गुर्जर प्रतिहार के महान शासक मीरभोज के द्वारा बनाया गया है!

अवतारवादः–

भारतीय सनातन संस्कृति में कई सारी अवतारवाद की कथाओं का प्रचलन मिलता है। ब्राहमण धर्म के ग्रन्थों की कथाओं में विष्णु भगवान ने पृथ्वी पर हर एक युग में पालन कर्ता के रुप में मानव कल्याण व धर्म की रक्षा करने हेतु विभिन्न विभिन्न रुपों में अवतार लिऐ है। अवतारवाद का सर्वप्रथम उल्लेख शतपथ ब्राहमण व तैतिरीय संहिता में वर्णन मिलता है। श्रीमद्भगवतगीता में भी अवतार सम्बन्धी वर्णन मिलता है।

'यदा यदा हि धर्मस्य गलानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाम्यानं सृजाम्हम।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

वायुपुराण के अनुसार विष्णु के अवतारों का वर्णन करते हुए पहले 12 लेकिन बाद में 10 अवतार बताये गये हैं। भागवद् पुराण में भी विष्णु के अवतारों की तीन (सक्षणीयो/श्रेणीयो) का वर्णन किया गया है. प्रथम (सर्वोणी / श्रेणी) 22 द्वितीय 23 तृतीय 16 की चर्चा का वर्णन है।

भारतीय संस्कृति की मुर्तिकला में कुषाण काल से पहले विष्णु के दशावतारों का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। गुप्तकाल के शासकों में वैष्णव धर्म की बढ़ती लोकप्रियता के कारण विष्णु भगवान के दशावतारों का महत्व अधिक हुआ है। भारत के स्वर्ण काल कहे जाने वाले गुप्त काल में विष्णु के दशावतार का महत्वपूर्ण उदाहरण उत्तर प्रदेश के ललितपुर जिले में स्थित देवगढ का दशावतार मंदिर में मिलता है। गुर्जर प्रतिहार काल के दौरान राजस्थान में जो मन्दिर स्थापय कला विकसित हुई, वास्तव में वह कला गुप्तकाल की उत्तराधिकारी है।

नृसिंह अवतार–

नृसिंह भगवान विष्णु के दशावतारों में अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट अवतार माने जाते हैं। यह अवतार भा. रतीय धार्मिक चिन्तन में दैवी शक्ति, धर्मरक्षा तथा अधर्म के विनाश का प्रतीक है। नृसिंह अवतार का स्वरूप पशु और मानव के अद्भुत समन्वय के रूप में निर्मित हुआ है, जिसमें मुख सिंह का तथा शेष शरीर मानव का प्रदर्शित किया गया है। यह मिश्रित स्वरूप भारतीय धार्मिक कल्पना और सांस्कृतिक समन्वय की एक महत्त्वपूर्ण अभिव्यक्ति है। भारतीय मूर्तिकला और पुराणिक साहित्य में नृसिंह की कल्पना केवल धार्मिक कथा नहीं, बल्कि शक्ति, साहस और दैवी न्याय की प्रतीकात्मक व्याख्या भी है।

विद्वानों के अनुसार नृसिंह उपासना का विकास भारतीय समाज की विभिन्न सांस्कृतिक धाराओं के समन्वय का परिणाम था। जिस प्रकार वराह तथा गज जैसे पशुओं की पूजा आर्येतर अथवा जनजातीय समुदायों में प्रचलित थी, उसी प्रकार सिंह भी अनेक अनार्य जातियों के लिए शक्ति और संरक्षण का प्रतीक माना जाता था। कालान्तर में इन लोकविश्वासों का वैष्णव धर्म में समावेश हुआ और विष्णु के अवतारवाद के अंतर्गत नृसिंह की अवधारणा विकसित हुई। जर्मन विद्वान डॉ. गोइटाज का मत है कि भारतीय संस्कृति में नृसिंह पूजा का व्यापक विधान शकों के आगमन के पश्चात् अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इससे यह संकेत मिलता है कि भारतीय धार्मिक परम्पराएँ समय–समय पर बाह्य एवं स्थानीय सांस्कृतिक प्रभावों को आत्मसात करती रहीं।

नृसिंह का प्राचीनतम उल्लेख तैत्तिरीय आरण्यक में प्राप्त होता है, जहाँ गायत्री मंत्रों के साथ अन्य देवताओं के समकक्ष नृसिंह का आह्वान किया गया है। यह उल्लेख इस तथ्य का प्रमाण है कि नृसिंह की अवधारणा का बीजारोपण वैदिक उत्तरकालीन साहित्य में ही प्रारम्भ हो चुका था। यद्यपि महाभारत में भी नृसिंह का उल्लेख प्राप्त होता है, तथापि वहाँ उनके आधे सिंह और आधे मानव स्वरूप का स्पष्ट विवरण नहीं मिलता। इससे ज्ञात होता है कि उस समय तक नृसिंह की मूर्त एवं सुस्पष्ट प्रतिमा–विधान पूर्णतः विकसित नहीं हुआ था।

नृसिंह अवतार के स्वरूप का अधिक स्पष्ट एवं व्यवस्थित वर्णन हरिवंश पुराण में प्राप्त होता है, जहाँ उन्हें आधा मनुष्य और आधा सिंह रूप में निरूपित किया गया है। इसके पश्चात् विष्णुधर्मोत्तर पुराण में नृसिंह के सिंहमुख तथा मानव शरीर का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। यह ग्रंथ मूर्तिकला, चित्रकला तथा स्थापत्य के शास्त्रीय सिद्धान्तों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण माना जाता है, अतः इससे यह भी स्पष्ट होता है कि नृसिंह प्रतिमाओं का शिल्प–विधान उस समय तक व्यवस्थित रूप ग्रहण कर चुका था। मत्स्य पुराण में नृसिंह और हिरण्यकशिपु के मध्य हुए युद्ध का अत्यन्त विस्तृत एवं नाटकीय वर्णन प्राप्त होता है। वहाँ युद्धरत नृसिंह की मूर्ति के निर्माण का भी निर्देश दिया गया है–

युध्यमानश्च कर्त्तव्यः क्वचित्करणबन्धनैः।
परिश्रान्तेन दैत्येन तज्जयेमा नो मुहुर्मुहः। दैत्यं प्रदर्शयेत्तत्र खड्गखेटक धारिणम्।।

अर्थात् हिरण्यकशिपु को हाथ में तलवार और ढाल धारण किए हुए नृसिंह पर निरन्तर आक्रमण करते हुए प्रदर्शित किया जाना चाहिए। जब वह युद्ध करते–करते थक गया और उसकी शक्ति क्षीण हो गई, तब नृसिंह ने अपने नखों द्वारा उसका उदर विदीर्ण कर दिया। यह वर्णन न केवल धार्मिक आख्यान को प्रस्तुत करता है, बल्कि मूर्तिकारों को युद्धरत नृसिंह की प्रतिमा निर्माण के लिए एक शास्त्रीय आधार भी प्रदान करता है।

इसी प्रकार ब्रह्माण्ड पुराण में भी नृसिंह और असुरों के मध्य सशस्त्र युद्ध का उल्लेख प्राप्त होता है–

ततः सः बाहुयुद्धेन दैत्येन्द्रं तं महाबलम् । नखैर्विभेद संक्रुद्धो नार्द्राः शुष्काः नखा इति।।"

अर्थात् युद्ध के समय अत्यन्त क्रोधित नृसिंह ने अपने तीक्ष्ण नखों से महाबली हिरण्यकशिपु का वक्ष अथवा उदर विदीर्ण कर दिया। इस प्रसंग में नृसिंह के नख केवल शारीरिक शक्ति के प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे दैवी न्याय और अधर्म के विनाश के दार्शनिक संकेत भी हैं।

भारतीय मूर्तिकला में नृसिंह के स्वरूप को सामान्यतः उग्र, वीर तथा गतिशील रूप में अंकित किया गया है। अधिकांश प्रतिमाओं में वे हिरण्यकशिपु को अपनी जंघा पर रखकर उसका उदर विदीर्ण करते हुए दिखाई देते हैं। उनके मुख पर क्रोध, नेत्रों में तीव्रता तथा शरीर की मांसल संरचना कलाकारों की अभिव्यक्तिपूर्ण शैली को दर्शाती है। प्रारम्भिक मध्यकालीन मंदिरों, विशेषकर राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा दक्षिण भारत की वैष्णव मूर्तिकला में नृसिंह प्रतिमाओं का अत्यन्त प्रभावशाली विकास दिखाई देता है।

इस प्रकार नृसिंह अवतार भारतीय धार्मिक परम्परा में केवल विष्णु के एक अवतार के रूप में ही महत्वपूर्ण नहीं है, बल्कि वह भारतीय संस्कृति में धर्म और अधर्म, भक्ति और अहंकार, तथा दैवी शक्ति और दानवी प्रवृत्ति के मध्य संघर्ष का सशक्त प्रतीक भी है। उनकी प्रतिमाएँ भारतीय मूर्तिकला में आध्यात्मिकता, वीरता और कलात्मक उत्कृष्टता का अद्वितीय समन्वय प्रस्तुत करती हैं।

आभानेरी में नृसिंह प्रतिमाएँ–

हर्षत माता मंदिर की मूर्तिकला प्रतिहारकालीन कला–परम्परा का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। इस मंदिर के शिल्पकारों ने वैष्णव, शैव तथा शाक्त परम्पराओं से संबंधित अनेक देवी–देवताओं एवं अवतारों का अत्यन्त सजीव और भावपूर्ण अंकन किया है। विशेष रूप से भगवान विष्णु के दशावतारों में नृसिंह अवतार का चित्रण यहाँ की मूर्तिकला का अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। प्रतिहारकालीन कलाकारों ने नृसिंह को केवल धार्मिक प्रतीक के रूप में नहीं, बल्कि दैवी शक्ति, धर्मरक्षा तथा अधर्म–विनाश के सजीव रूप में अभिव्यक्त किया है।

भारतीय शास्त्रीय ग्रंथों तथा मूर्तिशास्त्रीय परम्पराओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि नृसिंह की प्रतिमाओं के अनेक प्रकार विकसित हुए, जिनमें मुख्यतः गिरिज नृसिंह, स्थौण अथवा स्थानू नृसिंह, यानक नृसिंह विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें "स्थानू नृसिंह" स्वरूप में भगवान को स्थिर, युद्धरत तथा उग्र मुद्रा में प्रदर्शित किया जाता है। उत्तर भारत में इस प्रकार की प्रतिमाओं का व्यापक विकास राजस्थान के मंदिर केन्द्रों, विशेषतः ओसियां मंदिर समूह में दिखाई देता है। आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाएँ भी इसी प्रतिहारकालीन वैष्णव मूर्तिकला–परम्परा का सशक्त उदाहरण हैं।

हर्षत माता मंदिर में प्राप्त नृसिंह प्रतिमाओं में कलाकारों ने भगवान के उग्र एवं विकराल स्वरूप को अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से अंकित किया है। इन प्रतिमाओं में केवल पौराणिक आख्यान का चित्रण नहीं, बल्कि धर्म की रक्षा हेतु दैवी शक्ति के प्राकट्य का दार्शनिक भाव भी समाहित है। वर्तमान में यहाँ से नृसिंह की दो प्रमुख प्रतिमाएँ प्राप्त होती हैं, जो प्रतिहारकालीन मूर्तिकला की कलात्मक उत्कृष्टता तथा भावाभिव्यक्ति की परिपक्वता को स्पष्ट करती हैं।

प्रथम प्रतिमा–

प्रथम नृसिंह प्रतिमा मंदिर के मंडप स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। यह प्रतिमा अपने शिल्प, संरचना तथा भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसमें नृसिंह को चतुर्भुजी स्वरूप में प्रदर्शित किया गया है। प्रतिमा में भगवान विष्णु अपने उग्र नृसिंह रूप में राक्षस हिरण्यकशिपु का वध करते हुए अंकित हैं। उन्होंने हिरण्यकशिपु को अपने बाएँ घुटने पर दबा रखा है तथा निचले दोनों हाथों से उसका उदर विदीर्ण कर रहे हैं। यह दृश्य भारतीय मूर्तिकला में "विदारण मुद्रा" का अत्यन्त प्रभावशाली उदाहरण है। प्रतिमा में नृसिंह के ऊपरी बाएँ हाथ में चक्र धारण किया गया है, जो विष्णु की दैवी सत्ता तथा धर्मरक्षा का प्रतीक है। दायाँ ऊपरी हाथ वरद मुद्रा में प्रदर्शित है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उग्रता के मध्य भी भगवान भक्तों के प्रति करुणामय एवं रक्षक स्वरूप हैं। इस प्रकार प्रतिमा में उग्रता और करुणा का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

प्रतिमा के अधोभाग में बाएँ पैर के नीचे एक पुरुष आकृति अंकित की गई है। सम्भवतः यह दैत्य अथवा अधर्म का प्रतीकात्मक निरूपण है। इस पुरुष ने कंठा, यज्ञोपवीत, बाजूबन्द, मेखला, अधोवस्त्र तथा उत्तरीय धारण किया हुआ है। इससे तत्कालीन वेशभूषा तथा अलंकरण शैली की जानकारी प्राप्त होती है। कलाकार ने शरीर के

अंग–प्रत्यंगों, वस्त्रों की रेखाओं तथा आभूषणों की सूक्ष्मता को अत्यन्त संतुलित ढंग से उकेरा है।

प्रतिमा की संरचना में गतिशीलता, शक्ति तथा नाटकीयता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। नृसिंह के सिंहमुख की तीव्रता, फैले हुए केश, विशाल नेत्र तथा शरीर की मांसलता उन्हें अत्यन्त उग्र एवं वीर स्वरूप प्रदान करती है। यह प्रतिमा केवल धार्मिक कथा का दृश्यांकन नहीं, बल्कि धर्म और अधर्म के मध्य संघर्ष की दार्शनिक अभिव्यक्ति भी है।

द्वितीय प्रतिमा–

हर्षत माता मंदिर से प्राप्त दूसरी नृसिंह प्रतिमा एक आले में स्थापित है, जो स्तम्भों से निर्मित वास्तु संरचना के भीतर स्थित थी। यह प्रतिमा अष्टभुजी नृसिंह स्वरूप को प्रदर्शित करती है तथा अपने विशाल एवं विकराल रूप के कारण अत्यन्त प्रभावशाली प्रतीत होती है। यद्यपि प्रतिमा वर्तमान में आंशिक रूप से खण्डित अवस्था में है, तथापि इसके अवशेषों से इसकी मूल कलात्मक भव्यता का अनुमान लगाया जा सकता है। प्रतिमा में नृसिंह को प्रत्यालीढ़ मुद्रा के समान खड़े हुए दिखाया गया है। उनका बायाँ पैर एक पुरुष आकृति पर स्थित है, जबकि दायाँ पैर भूमि पर दृढ़ता से टिका हुआ है। यह मुद्रा युद्ध, शक्ति तथा विजय का प्रतीक मानी जाती है। इस प्रकार की मुद्रा प्रतिहारकालीन मूर्तिकला में दैवी वीरता को प्रदर्शित करने हेतु विशेष रूप से प्रयुक्त होती थी। यद्यपि प्रतिमा के अधिकांश हाथ खण्डित हो चुके हैं, तथापि बचा हुआ ऊपरी बायाँ हाथ अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसमें बालों की लटें दिखाई देती हैं। सम्भवतः यह हिरण्यकशिपु के केश पकड़े हुए नृसिंह का दृश्य था, जो युद्ध की उग्रता और नाटकीयता को व्यक्त करता है। प्रतिमा के दोनों ओर एक योद्धा तथा एक पुरुष सेवक की आकृतियाँ अंकित हैं, जो इस दृश्य को अधिक जीवंत और कथात्मक बनाती हैं। दाहिने पैर के समीप दो पुरुष आकृतियाँ अंकित हैं जिनके लम्बे बाल दर्शाए गए हैं। उनके सिरों के दोनों ओर आमों के गुच्छों का अंकन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भा. रतीय कला में आम के गुच्छे उर्वरता, समृद्धि तथा शुभता के प्रतीक माने जाते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि कलाकार ने केवल युद्ध दृश्य का ही अंकन नहीं किया, बल्कि सम्पूर्ण संरचना को अलंकरणात्मक सौन्दर्य भी प्रदान किया। प्रतिमा के आधार भाग में पत्तियों से अलंकृत पट्टिका उकेरी गई है, जो प्रतिहारकालीन सजावटी शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसके अतिरिक्त ऊपरी भाग में झाँकती हुई स्त्री आकृतियाँ अंकित हैं, जो सम्भवतः देवांगनाएँ अथवा दर्शक रूप में प्रदर्शित की गई हैं। ये आकृतियाँ मूर्ति को नाटकीयता तथा बहुस्तरीय कथात्मकता प्रदान करती हैं।

द्वितीय प्रतिमा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसका उग्र एवं वीरतापूर्ण भाव है। कलाकार ने नृसिंह को केवल देवता के रूप में नहीं, बल्कि दैवी शक्ति के मूर्त स्वरूप के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रतिमा की संरचना, मुद्रा, सहायक आकृतियाँ तथा अलंकरण सभी मिलकर प्रतिहारकालीन मूर्तिकला की उच्च कोटि की कलात्मक परिपक्वता को अभिव्यक्त करते हैं।

निष्कर्ष

भारतीय सनातन संस्कृति में उच्च स्थान प्राप्त करने वाले ब्राहमण ग्रन्थों में विष्णू भगवान के नृसिंह अवतार को अर्द्धमानव (पशु और मानव के बीच का जीव) कहा गया है। इस प्रकार हम देखते है कि नृसिंह की उपासना का विधान हमें शकों के आने के बाद मिलता है। राजस्थान में जन्मी गुर्जर प्रतिहार रथापत्य कला का प्रमुख केन्द्र रहा आभानेरी अपने समय में समृद्धशाली रहा। मोहम्मद गजनवी ने 1021–26 के काल में इसकी बढ़ती महत्त्वता को देखते हुऐ. इस मन्दिर की धरोहर को धाराशाही करने के पश्चात भी यह मन्दिर आज भी अपनी अस्मिता को बचाये हुये है। इतिहासकार व शोधार्थियों के लिए ये खण्डर आज भी शोध के लिए अति महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाएँ प्रतिहारकालीन वैष्णव मूर्तिकला की उत्कृष्ट उपलब्धियाँ हैं। इनमें धार्मिक आख्यान, दार्शनिक प्रतीकवाद तथा कलात्मक सौन्दर्य का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है। ये प्रतिमाएँ न केवल राजस्थान की मूर्तिकला परम्परा को समृद्ध करती हैं, बल्कि प्रारम्भिक मध्यकालीन भारतीय कला में नृसिंह उपासना की लोक. प्रियता और उसके वैचारिक महत्व को भी स्पष्ट करती हैं।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this

article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

संदर्भ

1. प्रत्यक्ष क्षेत्रीय सर्वेक्षण
2. डॉक्टर जगदीश सिंह गहलोत, कछवाहों का इतिहास, यूनिक ट्रेंडर्स, जयपुर, 2024
3. प्रभात कुमार, उत्तर भारत के प्रमुख मंदिर, प्रतिभा प्रकाशन, नई दिल्ली
4. आर्कियोलॉजी सर्वे रिपोर्ट
5. श्रीमद् भगवद्गीता 4/7/8
6. आर०जी० भण्डारकर, वैष्णविज्म, शैविज्म ऐण्ड माइनर रेलीजियस सिस्टम्स, वाराणसी, 1965, पृ० 41–42.
7. राजेंद्रलाल मित्रा द्वारा समुच्चय तैत्तिरीय आरण्यक, एक्स, एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल, कोलकाता।
8. महाभारत, आरण्यक पर्व, अध्याय 100, श्लोक 20.
9. महाभारत, शांतिपर्व, अध्याय 339, श्लोक 78.
10. हरिवंश पुराण, अध्याय 19, श्लोक 77.
11. विष्णुधर्मखण्ड पुराण, तृतीय अध्याय 78/2, श्लोक 1–6।
12. मत्स्य पुराण, अध्याय 260, श्लोक 34–35।
13. ब्रह्माण्ड पुराण, द्वितीय 3, अध्याय 5, श्लोक 29, श्री वेंकटेश्वर प्रकाशक, 1912, बम्बई

Cite this Article-

"लाखन सिंह; प्रो. प्रभात कुमार", "आभानेरी की नृसिंह प्रतिमाओं का विश्लेष्णात्मक अध्ययन" Shodhpith International Multidisciplinary Research Journal, ISSN: 3049-3331 (Online), Volume:2, Issue:03, May-June 2026

"Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under Creative Commons Attribution 4.0 (CC-BY), allowing others to use, share, modify, and distribute it with proper credit to the author."